पाठ - 3

G7HQ5N

भरत

यह तो सभी जानते हैं कि राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न चारों महाराज दशरथ के पुत्र थे। राजा दशरथ के तीन रानियाँ थीं। कौशल्या, कैकेयी और सुमित्रा। भरत कैकेयी के पुत्र थे। कैकेयी के कहने पर रामचन्द्र वन भेजे गए। रामचन्द्र के वन जाने के पश्चात् दशरथ की मृत्यु हो गयी। उसी समय भरत बुलाए गए। भरत उस समय अपने नाना के यहाँ थे।

चित्रकूट में भरत

भरत उन लोगों में नहीं थे जो तनिक बात से विचलित हो जाते हैं किन्तु जब उन्होंने सुना कि राम को वन भेजने में मेरी माता का हाथ है तब उनका कलेजा तिलमिला उठा। उन्होंने यह सोचा कि लोग सोचेंगे कि सिंहासन के लालच में भरत भी इनमें मिले रहे होंगे, यद्यपि उनकी यह शंका निर्मूल थी।

दशरथ के अन्तिम संस्कार से संबंधित कार्य होने के बाद लोगों ने उनसे अनुरोध किया कि राजा दशरथ की प्राण त्यागते समय यही आज्ञा थी कि आप अयोध्या के राजा बनें। इसलिए राज-काज सँभालिए और प्रजा का इस प्रकार पालन कीजिए कि वे सुखी हो। मुनियों ने, विद्वानों ने, रानियों ने उन्हें समझाया। परन्तु भरत नैतिक दृष्टि से इसे बहुत अनुचित समझते थे। पुराने नियमों के अनुसार सिंहासन का अधिकार सबसे बड़े पुत्र का होता है। राम सबसे बड़े थे। उन्हें वन में भेजकर दूसरा उनका सिंहासन हड़प ले, यह कैसे हो सकता था? सब लोगों ने यह भी समझाया कि यह तो पिता की आज्ञा है, इसका पालन

करना चाहिए। ऐसी अवस्था में सिंहासन पर बैठना अन्याय नहीं समझना चाहिए किन्तु भरत ने उन लोगों की बातें नहीं मानीं।

बड़े अनुनय-विनय के साथ उन्होंने लोगों से प्रार्थना की कि मुझे राम से भेंट करने की आज्ञा दी जाय और उन लोगों से आज्ञा प्राप्त कर वे रामचन्द्र से भेंट करने वन में गए।

अनेक वनों मंे घूमते, लोगों से पूछते, नदियों को पार करते वे उस पहाड़ पर पहुँचे जहाँ रामचन्द्र जी थे। राम को जब यह समाचार मिला तब सब कुछ छोड़कर वे सामने पहुँचे, भरत उनके चरणों में गिर गए। भरत के साथ और सब लोग भी थे, उनकी माताएँ भी थीं। भरत ने जिस-जिस प्रकार राम से विनती की, सारा दोष अपने सिर पर मढ़कर जिस ढंग से क्षमा-याचना की वह ऐसा उदाहरण है जिसकी तुलना का दूसरा उदाहरण संसार में नहीं मिलता। राम ने कहा, पिताजी की आज्ञा से तुम राज्य पर शासन करो। भरत ने राज्य को स्वीकार नहीं किया और कहा, आपका राज्य है, नियम से, विधान से आपको मिलना चाहिए, मेरा कोई अधिकार नहीं। तुलसीदास ने अपने 'रामचरित मानस' में इसका बहुत मार्मिक वर्णन किया है।

भरत की अनुनय-विनय के साथ लोगों ने भी रामचन्द्र को बहुत समझाया, किन्तु वे विचलित नहीं हुए। उन्होंने कहा कि मुझे तो जितने वर्षों के लिए आज्ञा मिली है उतने वर्ष रहना ही है। उसमें किसी प्रकार की कमी नहीं हो सकती। अन्त में जब राम किसी प्रकार नहीं माने तब भरत ने यह आज्ञा माँगी कि आपके नाम पर राज्य करूँगा, आपकी खड़ाऊँ सिंहासन पर बैठेंगी। राज्य आपका ही रहेगा, मैं आपका प्रतिनिधि ही रहूँगा।

भरत इसी रूप में अयोध्या लौट आये। वहाँ उन्होंने सिंहासन पर राम की खड़ाऊँ रखीं और अपना रहन-सहन तपस्वी के समान रखकर चौदह वर्षों तक राज-काज सँभाला। इतने दिनों तक उन्होंने बड़े विवेक से, न्याय से और धर्म से राज्य किया।

अभ्यास प्रश्न-

1. भरत कौन थे ? पिता की मृत्यु के समय वे कहाँ थे ?
2. भरत ने अयोध्या के राज्य को क्यों ठुकरा दिया ?
3. भरत ने राज्य को किस शर्त पर स्वीकार किया ?
4. भरत के चरित्र के अनुकरणीय गुणों को लिखिए।